द्वितीय सेमेस्टर, हिन्दी (एम.ए.)

Paper C.C. – 6

मध्यकालीन हिन्दी कविता (कबीर, सुर, तुलसी, मीरा, रैदास और बिहारी)

कबीर की भक्ति भावना

भक्तिकाल की निर्गुण धारा के सन्त कवि कबीर ने नाथ पन्थियों के हठयोग साधना में 'भक्ति भावना' का समावेश कर उसकी नीरसता को तरसता में परिवर्तित कर दिया। भक्त कबीर रामानन्द के शिष्य थें। कबीर का मानना है कि भक्ति भावना के लिए द्वैत आवश्यक है जो सगुणोपासना में ही सम्भव है क्योंकि निर्गुणोपासक तो आत्मा और परमात्मा के अद्वैत पर अधिक बल देते हैं। कबीर ने स्वयं यह स्वीकारा है कि भवसागर से पार जाने का साधन भक्ति है –

"भाव भगति हित बोहिया सद्गुरु खेवन हार।
अलप उदिम तब जांणिये जब गोपद सुर विस्तार।।"

संसार रूपी सागर से पार जाने के लिए भक्ति भाव ही जहाज है जिसके खेवनहार सद्गुरु हैं। भक्ति से भव सागर 'गोपद' से बने गड़ढे में भरे जल जैसा सुगमता से करने योग्य हो जाता है।

कबीर की भक्ति भावना में भौतिकता का कहीं भी कोई स्थान नहीं है। वह जीवन की सार्थकता को आत्मा का परमात्मा के मिलन में माना है। भक्तों ने प्रभु नाम स्मरण का प्रायः गुणगान किया है और इस श्रेणी से अलग नहीं हैं कबीर।

कबीर भी 'रामनाम' की महिमा का बखान करते हैं। वो भी एकाग्रचित होकर। क्योंकि जब मन दसों दिशाओं में घूमता है और फिर वह नाम का कितना भी जाप करे वह फलदायी नहीं होता।

महात्मा कबीर के गुरु रामानंदजी से गुरूमंत्र 'राम–राम' को पाकर ये संत महात्मा बन गए, पर इनके 'राम' दशरथ सूत 'राम' से भिन्न थें।

"दशरथ सुत तिहुँ लोक बखाना।
राम नाम का मरम है आना।।"

कबीर ने भक्ति भावना के लिए सदाचरण का महत्व दिया है। सदाचार भक्ति का प्रमुख अंग है। आचरण की शुद्धता के लिए व्यक्ति को सम्पूर्ण विकारों का परित्याग करना होगा। विकारों के जनक है–कंचन और कामिनी–इनके त्याग से ही सदाचार का मार्ग प्रशस्त होता है। वे कहते हैं:

"नारि नसावै तीनि सुख जा नर पासे होय।
भगति मुक्ति निज ज्ञान में पैसि न सकई कोय।।"

कबीर ने आचरण की शुद्धता के लिए कुसंग का त्याग करने एवं सत्यंग करने पर बल दिया है। कबीर का मत है कि जब तक मन में काम, क्रोध, मंद, लोभ, मोह, ईर्ष्या, द्वेष आदि विकास भरे हैं तब हृदय में भगवान की भक्ति नहीं आ सकती। भक्ति मार्ग पर चलने वाले व्यक्ति को अहंकार एवं कपट का भी परित्याग करना पड़ता है। 'मैं' का भाव ही अहंकार है, 'मैं' के समाप्त होने पर ही तू अर्थात परमात्मा की प्राप्ति हो पाती है :

"जब मैं था तब हरि नही अब हरि है मैं नांहि।
सब अँधियारा मिटी गया दीपक देख्या मांहि।"

x x x x x x x x

"भूखे भगति न कीजै
यह माला अपनी लीजै।।
दुह सेर मांगौ चूना,
पाव धीउ संग लूना।।
अधसेर मांगौ दाल।
मोको दोनों बखत निवाल।।
– – – – – – – –
कहि कबीर मन मान्या।
मन मान्या तौ हरि जान्या।।"

कबीर ने भूखे रह कर भक्ति करने से मना किया है। कबीर का मानना है कि जब मन भरा हुआ हो तो भक्ति करने में भी आनंद आता है। भूखे रह कर भक्ति करने पर ध्यान ईश्वर पर नहीं भूख पर रहता है। इसलिए जब भूख नहीं रहेगी, तब भक्ति पर ध्यान रहेगा।

कबीर को भगवान की सर्वशक्तिमत्ता में विश्वास है। श्रद्धा और विश्वास भक्ति के अनिवार्य तत्व हैं। कबीर को पूरा विश्वास है कि परमात्मा पूर्ण समर्थ है। वह राई को पर्वत और पर्वत को राई करने की सामर्थ्य रखता है, जैसे :

"साईं तूं सब होत है बन्दे थै कछु नांहि।
राई थे परबत करें, परबत राई मांहि।।"

कबीर यह स्वीकारते हैं कि मानव परमात्मा की कृपा से ही कुछ कर सकने योग्य बनता है। 'कबीर' को कबीर बनाने वाला भी वही है :

"ना किछु किया न करि सक्या
ना करणैं जोग सरीर।
जे किछु किया सो हरि किया,
ताथैं भया कबीर कबीर।।"

कबीर का यह ईश्वर विश्वास उनकी भक्ति का एक प्रमुख अंग है। जिसे पाकर चातक निहाल हो जाता है।

जो भक्ति चाहता है, उसे संसार के प्रति विरल भाव अपने मन में जगाना आवश्यक है। वैराग्य का तात्पर्य संसार को छोड़कर जंगाल में निवास करना नहीं है। संसार में ही रहते हुए भी मन में सन्तोष वृत्ति लाना, विषय भेगों के प्रति अनासक्त होना, आशा–तृष्णा से मुक्त होना ही वैराग्य है।

जब भक्त भगवान की ओर उन्मुख हो जाता है तो सांसारिक विषयों के प्रति विरक्ति स्वतः जाग्रत हो जाती है। कबीर की मान्यता है कि आशा और तृष्णा जन्म–जन्मान्तर तक पीछा करती रहती है :

"माया मरी न मन मुआ,

मरि–मरि जात सरीर।

आसा त्रिस्ना ना मरी,

सो कहि गए दास कबीर।।"

भक्त अपने सर्वस्व का समर्पण प्रभु के प्रति करता हुआ कामनाहीन हो जाता है। उसे अपने लिए कोई आकांक्षा नहीं रहती।

स्पष्ट है कि कबीर एक सच्चे भक्त थें। वे भक्ति की महिला गाते नहीं अघाते। भक्तिहीन जीवन को वो व्यर्थ बताते हैं।

प्रस्तुतकर्ता
डॉ० कंचन कुमारी
अतिथि शिक्षक
हिन्दी विभाग,
पटना विश्वविद्यालय, पटना
E-mail Id : kanchanroycool@gmail.com